SBC 59

ੴ

शुभ करमन ते कबहूँ न टरों ॥

गुरमत सहज मार्ग

(गुरबानी अनुसार)

राम चंद भटियाणी

सिख बुक सैंटर

गुरू गोबिंद सिंघ सटडी सरकल

माडल टाऊन ऐकसटैनशन

लुधियाना

मुल : एक रुपया

गुरमत सहज मार्ग

(ये विचार पुस्तक 'गुरू ज्ञान' लेखक स्वामी नित्या नन्द जी, प्रकाशक शरोमणी गु० प्र० कमेटी श्री अमृतसर से लिये गये हैं)

मनुष्य कितना भी बूढ़ा हो जाये, शरीर मुड़ कर कमान की भांति हो जाये, सिर कांपने लगे, आँखों की दृष्टि न रहे, मुँह में दांत न रहें, टांगें कमज़ोर हो जायें और शरीर का भार ना सहन करे, धन पास ना हो, पुत्र और पुत्रियाँ (बच्चे) अलग हो गये हों या परलोक सिधार गये हों। ऐसी अवस्था में भी मनुष्य दुनिया में रहना चाहता है और रहने को ही 'सत्य' मानता है।

मनुष्य जब किसी चीज़ को देखता है तो उसे उलट-पलट कर सभी तरफ से देखता है और उसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना चाहता है जिसे 'चित' कहते हैं।

कोई भी मनुष्य पढ़ा-लिखा या अनपढ़, मूर्ख या समझदार, सभ्य या असभ्य हमेशा पूरी कोशिश सुख की प्राप्ति के लिये करता है। इसी सुख को 'आनन्द' कहते हैं।

हर मनुष्य स्वतंत्रता चाहता है। वह चाहता है कि मेरे ऊपर कोई हुकम चलाने वाला ना हो और उसे किसी काम से ना रोका जाये। इसी इच्छा को 'मुक्त स्वरूप' कहते हैं।

इससे पता चलता है कि मनुष्य मात्र 'सत्य चित आनन्द स्वरूप' होना चाहता है। या नर हो कर नारायण बनना चाहता है।

मनुष्य का लक्ष्य या जीवन प्रयोजन परमात्मा की प्राप्ति के लिये है। संसार के सभी मत केवल इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिये ही हैं।

ये शरीर हरि मन्दिर है। इसमें वाहे गुरू का निवास है। वह घर-घर में वास करता है और सारा भ्रमाण्ड इस पिड़ में समा रहा है।

ये परमात्मा की बनाई हुई सुन्दर देह, गुफा में, पहाड़ों में नष्ट करने के लिये नहीं बनी है और ना ही अधिक तप करके भस्म करने के लिये या व्रत रख कर नष्ट करने के लिये बनी है।

मनुष्य का जीवन सभी जीवों से उत्तम जीवन है, ताकि वह अच्छे काम करे, जिससे परमात्मा की प्रशंसा हो, अपनी बुद्धि से संसारिक और व्यवहारिक कार्यों को पूरा करे और उसमें पूरी तरह विलीन ना हो और अपने लक्ष्य को ना भूले, अपने और दूसरों के अधिकारों को पहचाने, हृदय में हरि का वास जाने, सभी से समान्ता का व्यवहार करे, मेहनत से कमाई करे और दूसरों से मिलकर खाये, दूसरों की तकलीफों को समझे और पीड़ा महसूस करे, इस तरह सभी से प्रेम पैदा करे।

पहाड़ों की गुफाओं में रहने वाला और संसारिक कार-विहार करके दौलत इक्ट्ठा करने वाला, किसी का कुछ सुधार नहीं कर सकते और ना ही वह किसी अनाथ की रक्षा कर सकते हैं।

शरीर के अन्दर और मन के अन्दर आत्मा है। शरीर 'स्थूल' है। मन सूखम और चन्चल है और आत्मा से भी 'सूखम' है। इन तीनों में आत्मा मुख्य है। आत्मा की ताकत से मन और मन की प्रेरणा से शरीर काम करता है। मन चन्चल है। इसको काबू रखना कठिन है। अगर मन वासनाओं के पीछे दौड़े तो बार-बार जन्म लेने का चक्कर डाल देता है। यह जरूरी है कि शरीर, मन, प्राण, आत्मा के सहायक हों और आत्मा के इशारे पर काम करें। यही धर्म है और मुक्ति का मार्ग भी यही है। यही असली योग है और यही 'गुरू ज्ञान'।

आदमी का मन ही उस के बन्धनों का कारण है। चित के चलाएमान होने के कारण ही संसार के बन्धन हैं। चित को अटल करना 'मोख' है। चित की स्थिरता ही मुख्य साधन है। इसके बगैर सभी काम व्यर्थ हैं। मन पर काबू पाना ही योग की नींव है। चित विरतीयों को रोकना सहज काम नहीं है। मन को काबू करने के लिए बड़े-बड़े

योगियों ने बहुत यत्न किये लेकिन काबू नहीं पा सके।

सिध[1] साधक मौन[2] धारी रहे लिव लाये।

तिन भी तन मह मन ना दिखावनियाँ[3] । माझ म० ३-१२४

सनकादिक[4] नारद मुनसेखा[5] तिन भी तन में मन नहीं पेखा।

गौडी कबीर जी-३३०

([1] बड़े योगी और अभ्यासी, [2] चुप साधने वाले, [3] देखा, [4] सनातन, ब्रह्मा के पुत्र, [5] शेष नाग)

जिस तरह किसी भी किनारों तक भरी नदी के वेग को रोका नहीं जा सकता। उसी प्रकार मन की चन्चलता के वेग को ऋषि-मुनि भी रोक नहीं सके। मन का स्वभाव टलने वाला नहीं है, ये बहुत बल वाला है। इस लिए गुरू ज्ञान बताता है कि चित्त बिरती के वेग को रोकने का यतन करने के बजाय, इसके प्रवाह को बदल कर मन को वाहे गुरू की ओर मोड़ देना चाहिए। विश्यों का चिन्तन करते रहने से जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा रहेगा, लेकिन वाहे गुरू का चिन्तन करने लग जाये तो 'मोक्ष द्वार' प्राप्त करेगा। चित्त-विरती के विरोद का प्रश्न ही नहीं रहेगा। जितनी जिस चीज़ की चाह होगी उतना ही प्रबल चिन्तन होगा और ध्यान सदा उसी तरफ लगा रहेगा। चिन्तन को वाहे गुरू की तरफ मोड़ देने से भक्ति का बीज उत्पन्न हो जायेग और प्यार पैदा हो जायेगा। प्यार बिना भक्ति नहीं, भक्ति बिना प्रेम नहीं और प्रेम के बगैर आत्मनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती। प्रभु के साथ प्रेम करना ही सर्वोत्त्म भक्ति है।

जैसे-जैसे लक्ष्य प्राप्ति ही चाह बढ़ती है तैसे-तैसे ये चाह अपने आप स्वाभाविक और दृढ़ होती जाती है। वाहे गुरू की प्राप्ति के लिए जरूरी बात श्रद्धा और अटल विश्वास है। वाहे गुरू प्रेममई है और जीवों से प्यार करता है। जब जीव वाहे गुरू सर्वगुण सम्पन्न के गुणों को देख कर उसके प्रेम में गुण गायन करता है और वाहे गुरू के प्रेम में मगन होकर उसका नाम जप करता है और इस नाम जप का प्रवाह

चलता रहे तो मन अपने आप 'एकाग्र' (वाहेगुरू के आगे) हो जायेगा।

संसार में जन्म लेते ही जीव जब अपने आस-पास किसी को जो भी करते देखता है और कहते सुनता है उसी तरह करने और कहने का यत्न करता है और उसी तरह का उसका स्वभाव बन जाता है अर्थात् आदमी का ज्ञान भण्डार संगत से बनता है। संसारिक, व्यवहारिक, प्रमार्थक जिस तरह भी किसी की लगन लग जाये वह उसी से प्रभावित हो जाता है और संगत के प्रभाव से ही परिवर्तित होता है।

सत गुरू सच्चे पातशाह प्रमार्थ सिद्धि की पहली सीढ़ी 'संगत' ही बताते हैं और वाणी में फरमाते हैं :

सत संगत मिल सब सोझी पाये। आसा म० ३-३६४
बिन सत संग सुख किने ना पाया। सारंग म० ४-१२००
साध संग मल लाथी। पार ब्रह्म भयो साथी। सोरठ म० ५-६२५
जे लोड़े सदा सुख भाई साधु संगत गुरह बताई।
बसंत म० ५-११८२
मिल संत संगत खोज दसाई विच संगत हर प्रब बसे जियो।
माझ म० ४-९४

जिस सत संगत के बगैर सुख की प्राप्ति नहीं होती और जन्म-मरण के दुख काटे नहीं जाते वह सत संगत कैसी है वाणी फरमाती है :

सत संगत कैसी जाणिये जिथै एको नाम वखाणिये।
श्री राग म० १-७२

जहाँ एक वाहेगुरू का चिन्तन होता है, विचार होते हैं और कथा होती है, वही सत संग अर्थात् सच्चा संग है।

सत संग में जाकर वाहे गुरू का यश और उसके गुण गायन सर्वण किये जाते हैं। गुण सुनकर श्रद्धा पैदा होती है, जैसे-जैसे श्रद्धा बढ़ती है, तैसे-तैसे प्रेम पैदा होता है। जैसे-जैसे प्रेम का रंग चढ़ता है तैसे-तैसे संसारिक विश्य-वासनायों की तरफ से चित दूर हटता जाता है और हालत यहाँ तक पहुँच जाती है कि :

एक निमख जे बिसरै स्वामी जानो कोट दिनस लख बरिया।

सारंग म० ५-१२०९

आखा जिवा विसरे मरजाओ। आसा म० १-९

सत संग दो तरह का होता है :

1. जैसा कि ऊपर बताया गया है, जहाँ पर वाहे गुरू के सम्बन्ध में कथा-वारता और कीर्तन होता है।
2. गुरू वाणी और गुरू इतिहास का एकांत में बैठकर पाठ करना और विचार करना खास तौर पर सुखदाई सत संगत है क्योंकि कई बार कथा और किर्तन नज़दीक प्राप्त नहीं होते।

प्रमार्थ में मनुष्य का शत्रु (सबसे बड़ा शत्रु) अहंकार होता है। रुपैया-पैसा, ज़मीन-जायदाद, स्त्री, पुत्र, पुत्रियाँ और सम्बन्धी छोड़े जा सकते हैं लेकिन अहंकार नहीं छोड़ा जा सकता। बड़े से बड़ा योगी सालों साल की समाधि लगाने के बाद जब सुचेत होता है तो उसके चित्त के एक कोने में आवाज़ उठती है कि मैं बहुत तपस्वी हूँ और मेरे जैसा त्यागी और वैरागी कोई नहीं हैं। ज्ञानी ज्ञान प्राप्त करके और उपदेश्य बनकर यह समझता है कि मेरे जैसा कोई और नहीं है। अहंकार प्रमाथी आदमी का बड़ी दूर तक सूक्षम रूप धार कर पीछा करता है इससे बचना अति कठिन है। सत गुरू ने अहंकार को दूर करने का सबसे उत्तम रास्ता सेवा बताया है जो मन की मैल भी दूर करती है। अपने अन्दर दूसरों से बढ़पन का ख्याल मिट जाता है और अहंकार दूर हो जाता है। इस तरह दूसरों का कार्य सिद्ध होता है। सिखी की पहली सीढ़ी ही सेवा है। वाणी का फरमान है :

बिण सेवा ध्रिग हथ पैर होर निहफल करणी।

वार २७ म० १० भा० गुरदास जी

जेते जी तेते सब तेरे विण सेवा फल किसे नाहीं।

आसा म० १-३५४-५५

मन तन आगे राख के ऊभी सेव करे। सोरठ वार म० ३-६४८

तन मन अरप करो जन सेवा रसना हर गुण गावो।

देव गंधारी म० ५-५३३

सेवा करत हो ये निहकामी तिस को होत प्राप्त स्वामी।

गौड़ी सुखमणी म० ५ -२८६-८७

सेवा कई प्रकार की होती है :

संगत के जोड़े साफ करना, बर्तन साफ करने, झाड़ू देना, पंखा झलना, पानी ढोना, रोगियों का दवा दारू करना, अपंग, लूले लंगड़े रोगियों और बर्जुगों की सेवा करना सबसे उत्तम सेवाएँ हैं।

सेवा करने से मन की मैल उतरती है और अहंकार दूर होता है। आपस में प्यार बढ़ता है और र्स्वव्यापी वाहेगुरू घर-घर में नज़र आने लगता है।

सारे योगाचारियों के अनुसार सभी योग विधियों और क्रियाओं के बाद भी अगर वाहेगुरू के साथ प्रेम उत्पन्न नहीं होता तो वाहे गुरू की प्राप्ति नहीं हो सकती। यदि वाहे गुरू के साथ प्रेम के साथ ही वाहे गुरू की प्राप्ति है तो बेकार झमेलों के पड़ने की क्या जरूरत है। सत गुरू का फरमान है :

साच कहूँ सुन लेह सभै
जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभ पायो। सवयै - ५ - १०

सिख शरीर को नाश्वान समझता है, इसलिए वह इससे अच्छे से अच्छा और अधिक से अधिक काम लेता है। गुरू का सिख रात के पिछले पहर की नींद त्यागकर अमृत समय उठता है। शौच, दातुन, स्नान करके घर को ही वन समझकर वाहेगुरू से प्रीत जोड़ कर सिमरन करता है। दिन निकलने पर अपने कार-विहार के साथ-साथ प्रभु का सिमरन करता है और इस तरह संसार यात्रा को सफल करता है।

गुरू का सिख परिवार में वैठा संसारिक है, कार-विहार करना त्यागी है। अनाथों की रक्षा करता हुआ भी अहिंसक है। वह धर्मवीर है, धर्म नहीं हारता और धर्म की हानि नहीं सहता।

तन मन धन सब सौंप गुर को हुकम मनियै पाईयै।

रामकली म० ३ अनन्द - ९१८

यही सबसे उत्तम भक्ति का रास्ता है अर्थात् अपना सब कुछ अर्पण कर देना और 'भाणें' में आ जाना।

सतगुर अगे ढै पौ सब किछ जाणै-जाण
आसा मण्सा जलाए तूँ होए रहू महमान।

सोरठ वार म० ३ - ६४६

केतयाँ दूख भूख सदमार ए बी दात तेरी दातार।
बन्द खलासी भाणें होए, होर आख न सके कोए।

जपजी साहिब म० १ - ५

कईयों को दुख और भूख की सदा मार पड़ती है। ये भी वाहे गुरू की दात है। 'भाणे' में रह कर ही 'बन्दखलासी' अर्थात् मुक्ति हो सकती है और कोई बात कही नहीं जा सकती अर्थात् और कोई रास्ता नहीं है।

योग साधन करते हुए कई तरह के कष्ट सह कर, एक लम्बा सफर करके भी प्रेम मार्ग की शरण लेनी पड़ती है। क्यों ना पहले ही गुर सिखी के प्रेम मार्ग पर चला जाए जिसे 'सहज' मार्ग कहते हैं। वाणी का वाक है :

गुरमुख नाम दान इसनान
गुरमुख लागे सहज ध्यान। रामकली म० १-९४२

जिस आदमी ने गुरू को अपना मुख बनाया है और गुरू के हुकम को अपना कर्तव्य बना लिया है उस को यह तीन बातें याद रखनी जरूरी हैं : 'नाम', 'दान' और 'इसनान'। गुरू सिखों का सबसे पहला काम है इसनान करना :

कर इसनान सिमर प्रभ अपना
मन तन भये अरोगा। सोरठ म० ५-६११

इसनान तीन तरह का है : पहला शारीरिक, दूसरा मन का और

तीसरा आत्मिक।

शारीरिक : गुरसिख अमृत समय उठ कर सुचेत हो और आयु और शरीर के अनुसार ठन्डे, ताजा या गरम जल से स्नान करे। स्नान करने से शरीर अरोग रहेगा और मन पर शान्ति का प्रभाव पड़ेगा। लेकिन नहाने में हठ नहीं करना।

मन का : मन की मैल, बुरी वासना, बुरे विचार, निंदा का त्याग करे। किसी का बुरा मत चितवे। पर धन और पर स्त्री से बचना चाहिए। मन की विरतियों को एकाग्र करना मन का स्नान है।

आत्मिक : आत्मा को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि मैं शरीर से अलग चीज़ हूँ। मैं कुछ नहीं, चित नहीं और मन भी नहीं। मैं इन सब से अलग और इन सब को ताकत देने वाली ज्योति स्वरूप राम का अंश हूँ। इस तरह अपने आप को "द्ववैत भाव" से निकाल कर माया से अलोप होना आत्मिक स्नान है।

दान भी तीन तरह का है : शरीर, मन और आत्मा का।

शरीर : सतसंग में जाना, प्यासों को पानी पिलाना, भूखों को खाना खिलाना, रागियों, बर्जुगों, यतीमों, अनाथों, विधवा स्त्रीयों, इन सब की रोटी और कपड़े से सेवा करनी शरीर का दान है।

मन : जीव मात्र का भला चितवना, बुरे का भला करना, बुरे और गलत रास्ते चलते इंसानों के लिए अरदास करना। बड़ा दान विद्या और उससे बड़ा दान मन का दान "आत्म विद्या दान" दूसरों को प्रेरणा से धर्म की तरफ लगाना, मुक्ति की तरफ ले जाता है और वह सबसे उत्तम दान है।

आत्म दान : संसार के भले के लिए इस तन, धन, ऐश-इशरत, रुतबा-सारी चीज़ों की तरफ से बेपरवाह होकर जिस चीज़ के देने से किसी का भार हल्का हो, दुख तकलीफ कम हो, सुख आनन्द बड़े और सब का भला हो देते वक्त "हन्गता" और "ममता" दिल में ना लाने का भाव दिल में रखना आत्मदान है।

तेरो कीया तुझे क्या अरपौ। धनासरी भगत रवीदास जी - ६९४

नाम : वाहे गुरू प्यार है और प्यार स्वरूप है, जो चारों दिशाओं में फैल रहा है। उसकी प्राप्ति में सुख आनन्द और कल्याण है। परन्तु वह अदृश्य अगम (पहुँच से दूर), अगोचर (जो मन वाणी का विषय नहीं) फिर उसकी प्राप्ति कैसे हो ? हिन्दु शास्त्रकारों ने उसकी प्राप्ति का साधन 'योग' बताया है परन्तु सत-गुरूओं ने उसकी प्राप्ति का एक मात्र साधन 'नाम जपना' बताया है। ये मार्ग निश कंटक, निडरता, निशचिन्तता का है। यही सीधा रास्ता है। इस मार्ग पर चलने वाला निस्नदेह तत्व वस्तु वाहे गुरू को प्राप्त करता है।

सभी नामों में सिद्ध नाम 'वाहेगुरू' है। यह तारक मंत्र है और इसमें बेअंत शक्ति है।

नाम जपने का ढंग ये है कि उठते-बैठते, चलते-फिरते, खाते-पीते, जुबान से वाहेगुरू नाम का उचारण होता रहे। पहले इसके लिए अभ्यास करना पड़ेगा, फिर यह स्वाभाविक हो जायेगा और इस तरह नाम रटन शुरू हो जायेगा। इस अवस्था को 'अजपा जाप' कहते हैं। जैसे-जैसे नाम अभ्यास बढ़ता है तैसे तैसे मन साफ होता जाता है और मन की एकाग्रता आ जाती है और अंत में नाम इंसान को नामी तक पहुँचा देता है।

नाम सिमरन करते हुए अपने आप को वाहेगुरू की हजूरी में समझना चाहिए। वाहेगुरू से प्रेम मगन होकर लिवलीन हो जाना चाहिए और एकाग्र चित होकर सिमरन करना चाहिए। यह ही 'स्वश्रेष्ठ जप' है।

नाम जप ही एक ऐसा मार्ग है जो जीव मात्र के लिए सुखदाई है। इसके सभी अधिकारी हैं। यही श्रेष्ठ सीधा रास्ता है जिस पर हर कोई निडर होकर जा सकता है।

नाम का उचारण करना मात्र बड़ा लाभदायक है, परन्तु जिस समय नाम जप हो उस समय वाहेगुरू के गुणों का ध्यान होना चाहिए। उसकी

अपार कृपा का चिन्तन करके गद-गद होकर नाम उचारण करना सबसे श्रेष्ठ है। इस लिए प्रमार्थ की सिद्धि के लिए 'नाम जपन' के बगैर किसी और साधन में लगने की भूल नहीं करनी चाहिए। सत गुरू का फरमान है :

अब कलू आयो रे इक नाम बौवो बौवो।
अनरूत नाही-नाही मत भरम भूलो-भूलो। बसंत म० ५-११८५

ऊपर बताया है कि गुरू बाणी के फरमान स्पष्ट हैं कि गृहस्थ में रहते हुए और सभी कार्य करते हुए 'नाम जप' करना है और गुरू घर की मर्यादा ही 'प्रवाण गृहस्थ उदास' है।

जेसे :-

नानक नाम वसया जिस अन्तर प्रवाण गृहस्थ उदास जियो।
माझ म० ५-१०८

सत गुर की ऐसी वडयाई पुत्रर कलितर विचे गत पाई।
धनासरी म० १-६६१

हसन्दिया खेलन्दयाँ, पैनन्दयां, खावंदयां विचे होवे मुकत।
गुजरी वार म० ५-५२२

योगियों के हठ योग, पहाड़ों की कंदरों में बैठ कर तप या व्रत रख कर शरीर को कष्ट देकर कमजोर करना या मौन व्रत रखना आदि कर्मो और गुरूमत में यह अन्तर है कि :

1. योगी या तपस्वी संसार सागर में से अपने आप को बचा कर निकालना अपना आदर्श समझते हैं।
2. सतगुरू के सिख संसार सागर में डूबते और गोते खाते लोगों के बाजू पकड़कर उनको पार लगाते हैं और फिर अपना उद्धार करना अपना कर्तव्य समझते हैं।

गुरू के सिख का जीवन दूसरों का दुख बांटना, किसी व्यक्ति को दुखी या जरूरतमंद देख कर अपने आप को भूल कर भूखों को रोटी, प्यासों के लिए पानी, नंगे के लिए कपड़ा और ज़ख्मी के लिए मर्हम

का प्रबन्ध करते हैं। गुरू के सिख अपना आप गुरू की भेंट करके गुरू के हो जाते हैं और अपना कुछ भी ना समझते हुए खाते, पीते, पहनते, चलते-फिरते दूसरों के लिए हैं। बेगानी आग में जलते, दूसरों को जीवन देने के लिए मरते, सोये और गिरे हुओं को उठाने के लिए जीते हैं। गुरू के पूर्ण सिख का शरीर संसार के उपकार के लिए और मन नाम के लीन होता हुआ वाहेगुरू के चरणों में जुड़ा रहता है।

तिन के घर मंदर महल सराई सब पवित है
जिनी गुरमुख सेवक सिख अभिआगत जाये वरसाते
तिन के तुरे जीन खुरगीर सब पवित हैं
जिनी गुरमुख सिख साध संत-चड़ जाते।

सोरठ वार म० ४-६४८

गुरू मत का 'नाम जप' वाहेगुरू की प्राप्ति का एक ऐसा सुगम साधन है, जिसमें कोई कठिनाई नहीं, कोई खर्च नहीं, कोई कठोर नियम नहीं, नियमों की कोई सखती नहीं है। जहाँ चाहो, जिस समय चाहो 'जप' किया जा सकता है। आते-जाते, उठते-बैठते, कार्य करते हुए, खाते-पीते, सोते-जागते, और चलते-फिरते 'जप' करने में कोई रूकावट नहीं और ना ही किसी नियम का बन्धन है यह ही 'गुरू मत का सहज' मार्ग है।

राम चन्द भटियाणी
सी 6 ए/25बी, जनक पुरी,
नई दिल्ली-110058